भय

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. दुःख या आपत्ति का पूर्ण निश्चय न होने पर कौन-सा मनोभाव उत्पन्न होता है?

(क) भय
(ख) क्रोध
(ग) लज्जा
(घ) आशंका

उत्तर: (क)

प्रश्न 2. “कल तुम्हारे हाथ-पाँव टूट जाएँगे” ऐसा वाक्य सुनकर क्या अनुभूत होगा?

(क) क्रोध
(ख) निराशा
(ग) भय
(घ) उत्साह

उत्तर: (ग)

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. साहसी व्यक्ति कठिनाई में फँस जाने पर क्या करता है?

उत्तर: साहसी व्यक्ति कठिनाई में फंस जाने पर डरता नहीं। उससे बचने का उपाय करता है।

प्रश्न 2. भय क्या है?

उत्तर: किसी भावी संकट का आभास होने और स्वयं में उससे बचने की सामर्थ्य न देखकर जो मनोविकार मनुष्य के मन में पैदा होता है, उसको भय कहते हैं।

प्रश्न 3. क्रोध और भय में क्या अन्तर है?

उत्तर: क्रोध के लिए भय कारक का ज्ञान होना आवश्यक है किन्तु भय के लिए इतना जानना ही बहुत है कि संकट आएगा अथवा हानि होगी।

प्रश्न 4. भय भीरुता में कब बदल जाता है?

उत्तर: जब भय व्यक्ति का स्वभाव बन जाता है तो वह भीरुता में बदल जाता है।

प्रश्न 5. ऐसी कौन-सी भीरुता है, जिसकी प्रशंसा होती है?

उत्तर: संसार में एकमात्र भीरुता जिसकी प्रशंसा होती है, धर्मभीरुता है।

लघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. आशंका और भय में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: किसी भावी आपत्ति की भावना अथवा दुःख के कारण का पता चलने पर मन में उत्पन्न होने वाले आवेगपूर्ण अथवा स्तम्भकारक मनोविकार को भय कहते हैं। आशंका एक ऐसा आवेगरहित मनोविकार है जो दुःख की सम्भावना के अनुमान से ही उत्पन्न हो जाता है।

प्रश्न 2. व्यापारी द्वारा नया व्यापार शुरू न करने, पण्डित का शास्त्रार्थ में भाग न लेने का मूल कारण क्या हो सकता है?

उत्तर: व्यापारी किसी हानि के भय से किसी नए व्यापार में हाथ नहीं डालता तथा पण्डित पराजित होने और मानहानि होने के भय से शास्त्रार्थ से दूर भागता है। दोनों के मूल में भीरुता की भावना रहती है।

प्रश्न 3. भय की अधिकता किसमें रहती है?

उत्तर: भय की अधिकता असभ्य तथा जंगली लोगों में अधिक होती है। भय के कारण वे सम्मान करते हैं। उनके देवी-देवता भय के प्रभाव से ही कल्पित होते हैं। जिससे वे डरते हैं उसकी पूजा करते हैं। किसी आपत्ति अथवा संकट के भय से बचने के लिए ही वे देवी-देवताओं की पूजा करते हैं।

प्रश्न 4. सभ्य और असभ्य प्राणियों के भय में क्या अन्तर है?

उत्तर: असभ्य प्राणियों में भूत-प्रेत, पशु आदि का भय अधिक होता है। उनको किसी व्यक्ति द्वारा अपनी सम्पत्ति जबरदस्ती छीने जाने का भय रहता है। सभ्य प्राणियों का भय कुछ अन्य प्रकार का होता है। उनको भय रहता है कि कोई चालाक आदमी नकली दस्तावेज, कानूनी बहस तथा झूठे गवाहों को अदालत में पेश करके उनको धन-सम्पत्ति से वंचित न कर दे।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. दुःख की छाया को हटाने के लिए व्यक्ति किन बलों का उपयोग करता है? और कैसे?

उत्तर: प्रत्येक प्राणी होश सँभालते ही अपने चारों ओर दुःखपूर्ण संसार रच लेता है। इसको क्रमशः अपने

ज्ञान-बल से तथा कुछ बाहुबले से सुखमय बनाता है। क्लेश और बाधा को वह जीवन का सामान्य हिस्सा तथा सुख को उसका अपवाद समझता है। धीरे-धीरे मनुष्य की आयु बढ़ती है और उसके ज्ञान तथा शारीरिक शक्ति की वृद्धि होती है।

उसके परिचय-क्षेत्र का विस्तार होता है तथा उसके ज्ञान की भी वृद्धि होती है। पहले वह अपने माता-पिता के सम्पर्क में आता है तथा धीरे-धीरे परिवार तथा बहुत से लोग उसके सामने प्रतिदिन आते हैं। वह जान लेता है कि ये लोग उसको सुख पहुँचाएँगे, दु:ख नहीं देंगे।

धीरे-धीरे उसकी झिझक खुलती जाती है। उसका ज्ञान बढ़ता जाता है। उसका आत्मबल तथा शारीरिक बल भी बढ़ता जाता है। तब वह :ख से मुक्त होने के लिए तथा सुख पाने के लिए उनका उपयोग करता है।

अपने आस-पास के लोगों, पशुओं, विश्वासों आदि से दु:खी होने का जो भय उसके मन में रहता है वह धीरे-धीरे दूर होता है। शारीरिक बल की वृद्धि भी उसमें आत्म-विश्वास पैदा करती है तथा उसको दु:ख सहने तथा उसे हटाकर सुख पाने की अपनी शक्ति पर विश्वास हो जाता है। यह सब धीरे-धीरे विकास के सामान्य नियम के अनुसार होता है।

प्रश्न 2. "सभ्यता से अन्तर केवल इतना पड़ा है कि दुःख-दान की विधियाँ बहुत गूढ़ और जटिल हो गई हैं।" पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: आगामी दु:ख की कल्पना अथवा सम्भावना से मनुष्य भयभीत होता है। आरम्भ में उसको अपरिचितों, पशुओं तथा कुछ प्रचलित काल्पनिक विश्वासों से भी डर लगता है। संसार में दु:ख को वह अपने चारों ओर बिखरा पाता है। दु:ख के कारण भी सर्वत्र उपस्थित रहते हैं।

असभ्य जातियों में दूसरों से कष्ट पाने तथा भयभीत होने का भाव अधिक पाया जाता है। सभ्यता का विकास होने पर मनुष्य को भरोसा हो जाता है कि लोग उसको दु:ख नहीं पहुँचाएँगे। समाज और कानून उनको ऐसा नहीं करने देगा।

सशक्त जन अशक्तों को दु:ख देते ही हैं। धन-सम्पन्न लोग तथा देश निर्धनों का शोषण करते ही हैं। दूसरों को दु:ख देने की यह परम्परा नई नहीं है। सभ्यता के विकास के साथ दूसरों को दु:खी करने और सताने के तरीके अवश्य बदल गए हैं। पहले कोई भी शक्तिशाली मनुष्य दूसरे के बाग-बगीचे, जमीन, घर-मकान, रुपया-पैसा आदि को जबरदस्ती उससे छीन लेता था और वह कुछ नहीं कर पाता था।

लूटपाट का यह रूप सभ्यता के विकास के साथ बदल गया है। अब बलात् अपनी सम्पत्ति छीने जाने का डर तो मनुष्य को नहीं सताता परन्तु उसका एक दूसरा रूप उसको आतंकित करता रहता है।

आज कोई चालाक आदमी नकली कानूनी दस्तावेज तैयार कराकर, झूठे गवाह अदालत में पेश करके तथा वकीलों को पैसा देकर अदालत में बहस कराकर किसी दूसरे की सम्पत्ति को हड़पने में समर्थ हो सकता है। कानून का सहारा लेकर वह उसको उसकी सम्पत्ति से वंचित कर सकता है तथा स्वयं उसका मालिक बन सकता है।

प्रश्न 3. भय के साध्य और असाध्य दोनों रूपों को सोदाहरण समझाइए।

उत्तर: भय के साध्य और असाध्य दो रूप हैं। असाध्य रूप वह है जिसका निवारण प्रयत्न करने पर भी न हो सके अथवा असम्भव जान पड़े। उसका साध्य रूप वह होता है कि जिसको प्रयत्नपूर्वक किया जा सकता हो । भय के किसी कारक से यदि हम प्रयत्न करके बच सकते हैं तो यह उसका साध्य रूप माना जाएगा।

उदाहरणार्थ- दो मित्र आपस में बातचीत करते हुए प्रसन्तापूर्वक एक पहाड़ी, नदी के किनारे जा रहे हैं। अचानक उनको किसी शेर की दहाड़ सुनाई देती है। इससे वे भयभीत हो उठते हैं तथा शेर से बचने के लिए वहाँ से भाग जाते हैं अथवा किसी स्थान पर छिप जाते हैं अथवा किसी पेड़ पर चढ़ जाते हैं। इस प्रकार उनकी रक्षा हो जाती है। उनके इस भय को प्रयत्न साध्य कहेंगे।।

भय का कौन-सा रूप साध्य है अथवा कौन-सा असाध्य ! इसका निश्चय मनुष्य के स्वभाव पर निर्भर करता है। मनुष्य की विवशता तथा अक्षमता की अनुभूति के कारण ही किसी भावी कष्ट की अनिवार्यता निश्चित होती है। यदि मनुष्य साहसी होता है तो वह भयभीत नहीं होता है और यदि डरता भी है, तो उससे बचने का उद्योग करता है।

ऐसी स्थिति में भय का स्वरूप साध्य हो जाता है। यदि उसको दु:ख के निवारण का अभ्यास नहीं होता अथवा उसमें साहस का अभाव होता है तो वह भय के कारण स्तम्भित हो जाता है तथा उसके हाथ-पैर भी नहीं हिलते। ऐसी स्थिति में हमें भय के असाध्य रूप के दर्शन होते हैं।

प्रश्न 4. मनुष्य के भय की वासना की परिहार कैसे होता है?

उत्तर: किसी भावी आपत्ति अथवा दु:ख के कारण के साक्षात्कार से मनुष्य के मन में भय का भाव उत्पन्न होता है। आरम्भ से ही वह अपने आस-पास दु:खपूर्ण वातावरण फैला देखता है। उस दु:ख से बचने के उपाय का ज्ञान न होने से उसमें भय पैदा हो जाता है। जब बच्चा छोटा होता है तो वह सभी से डरता है। वह किसी अपरिचित को देखकर घर में घुस जाता है। पहली बार सामने आने वाले व्यक्ति तथा अज्ञात वस्तुओं के प्रति उसके मन में भय की ही भावना रहती है।

मनुष्य के मन से इस भय के भाव का निवारण धीरे-धीरे ही होता है। शारीरिक शक्ति बढ़ने के साथ ही उसका आत्मबल बढ़ता है। शनै: शनै: उसका ज्ञान बल भी बढ़ता है। इनकी वृद्धि होने पर उसके मन से दु:ख की छाया हटती जाती है तथा दु:ख के कारण निवारणीय बन जाते हैं तथा उसके प्रति भय का जो भाव उसके मन में था, वह दूर हो जाता है।

सभ्यता के विकास से भी भय का परिहार होता है। वैसे भी भय मनुष्य की शक्तिहीनता तथा अक्षमता का परिणाम होता है। शरीर बल तथा ज्ञान बल की वृद्धि होने पर कोई कष्ट अथवा दु:ख अनिवार्य नहीं रह जाता तथा मनुष्य उससे मुक्त होने का उपाय जान जाता है।

ऐसी अवस्था में उस कारण से उत्पन्न भय भी उसके मन से दूर हो जाता है। उदाहरणार्थ, पहले मनुष्य भूतों और पशुओं से डरता था। किन्तु अब सभ्यता के विकास के साथ उसका ज्ञान बढ़ गया है और वह अब इनसे नहीं डरता।

प्रश्न 5. निर्भयता के लिए शुक्ल जी ने क्या उपाय बताए हैं?

उत्तर: मनुष्य अपने जन्म के समय से ही अपने चारों ओर के वातावरण को दु:खमय पाता है और अपनी अक्षमता के वशीभूत होकर वह दु:ख को अनिवार्य पाता है और दु:ख के कारण के प्रति उसका मन भय से भर जाता है। शुक्ल जी ने निर्भीकता के लिए निम्नलिखित उपाय बताए हैं

1. शारीरिक बल में वृद्धि-शारीरिक बल की वृद्धि होने पर मनुष्य दु:ख के कारण को परिहार्य मान लेता है तथा उससे उसको डर नहीं लगता। साहसी व्यक्ति निर्भीक भी होते हैं।

2. ज्ञान-बल-जब मनुष्य का ज्ञान बढ़ता है तो उसको भयभीत करने वाले कारणों का पता चल जाता है और उनसे बचने के उपाय ज्ञात हो जाते हैं। तब भी वह निर्भीक हो जाता है।

3. सभ्यता का विकास- भय असभ्य तथा जंगली लोगों में अधिक होता है। सभ्यता का विकास होने पर मनुष्य में निर्भीकता आ जाती है। अपरिचित के प्रति भय, भूत-प्रेत के प्रति भय तथा पशुओं के प्रति भय की भावना सम्म्यता के विकास के साथ पुरुषों के मन से दूर हो जाती है।

4. सुसंस्कृति और शील-मनुष्य जब सुसंस्कृत और शीलवान हो जाता है तो किसी को कष्ट देने अथवा अपनी शक्ति का प्रयोग उसको पीड़ित करने के लिए नहीं करता।

   ये चीजें असभ्यता का लक्षण हैं। इनसे मुक्त होने पर मनुष्य द्वारा मनुष्य को दु:ख देने की सम्भावना न रहने पर समाज में निर्भीकता का वातावरण उत्पन्न होता है।

5. पराक्रम और उत्पीड़क को दण्डित करना–समाज में निर्भीकता का भाव पैदा करने के लिए असभ्य तथा उत्पीड़न करने वालों को दण्डित करना भी आवश्यक होता है। दुष्ट लोग हर समाज में होते हैं जो सज्जनों को सताते हैं। उनको दण्ड द्वारा ही नियन्त्रित किया जा सकता है।

6. आदर्श शासन-व्यवस्था-संसार में अब दो सबल देशों के बीच आर्थिक स्पर्धा तथा एक सबल तथा दूसरे निर्बल देश के मध्य शोषण की क्रिया चल रही है।

   इससे भी संसार में भय फैला हुआ है। लोगों को शोषण से मुक्त करके ही निर्भय बनाया जा सकता है। इसके लिए शासन सत्ता का आदर्श तथा न्यायप्रिय होना जरूरी है।

प्रश्न 6. निम्नलिखित गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

(क) ‘धर्म से डरने …… अच्छी ही नहीं लगती।’

(ख) ‘भय नामक मनोविकार …… भय से चल सकता है।’

उत्तर: संकेत – (क) पूर्व में दिए गए ‘महत्त्वपूर्ण गद्यांशों को सन्दर्भ-सहित व्याख्याएँ प्रकरण को देखिए।

अन्य महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. शुक्ल जी के मनोविकार सम्बन्धी निबन्धों के संग्रह का नाम है –

(क) चिन्तामणि
(ख) अमरमणि
(ग) नागमणि
(घ) दिव्यमणि

2. भय जब स्वभावगत हो जाता है, तो कहलाता है –

(क) आशंका
(ख) भय
(ग) भीरुती
(घ) धीरता।

3. स्त्रियों की भीरुता उनके किस गुण के समान रसिकों को आनन्दित करती है?

(क) कायरता
(ख) लज्जा
(ग) पाक कुशलता
(घ) सुन्दरता

4. किस प्रकार की भीरुती प्रशंसनीय होती है?

(क) शिक्षक भीरुता
(ख) पत्नी भीरुता
(ग) वृद्धजन भीरुता
(घ) धर्म भीरुता

5. सुखी और आतंक मुक्त होने का अधिकारी है –

(क) प्रत्येक पुरुष
(ख) प्रत्येक बच्चा
(ग) प्रत्येक स्त्री
(घ) प्रत्येक प्राणी

उत्तर:

1. (क)
2. (ग)
3. (ख)
4. (घ)
5. (घ)

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. मनुष्य को 'क्रोध' कब आता है?

उत्तर: दु:ख के कारण का स्वरूप-बोध होने पर मनुष्य को क्रोध आता है। दु:ख देने वाला क्रोध का लक्ष्य होता है।

प्रश्न 2. 'भय' मनुष्य के मन में कब उत्पन्न होता है?

उत्तर: किसी भावी दु:ख का कारण पता चलने पर भय उत्पन्न होता है।

प्रश्न 3. पुरुषों में भीरुता का होना कैसा समझा जाता है?

उत्तर: पुरुषों में भीरुता का होना निन्दनीय समझा जाता है।

प्रश्न 4. शत्रु का सामना न करके वहाँ से भाग जाना क्या प्रकट करता है?

उत्तर: शत्रु का सामना न करके वहाँ से भागना सिद्ध करता है कि भागने वाले में शारीरिक दु:ख को सहन करने की क्षमता नहीं है।

प्रश्न 5. "ऐसा जान पड़ता है कि पुराने जमाने से पुरुषों ने न डरने का ठेका ले रखा है।" इस वाक्य में किस शैली का प्रयोग हुआ है?

उत्तर: "ऐसा जान पड़ती है........ठेका ले रखा है।" वाक्य में लेखक ने हास्य-व्यंग्य शैली का प्रयोग किया है।

प्रश्न 6. शास्त्रार्थ से बचने का प्रयास करने वाले पण्डित के बारे में क्या पता चलता है?

उत्तर: कोई पण्डित शास्त्रार्थ से बचता है तो पता चलता है कि उसमें शास्त्रार्थ में पराजित होने पर मान हानि सहने की क्षमता नहीं है तथा अपनी विद्या बुद्धि पर विश्वास भी नहीं है।

प्रश्न 7. आशंका किसको कहते हैं?

उत्तर: दु:ख अथवा आपत्ति का पूर्ण निश्चय न रहने पर उसकी सम्भावना के अनुमान से उत्पन्न होने वाले आवेग शून्य भय को आशंका कहते हैं।

प्रश्न 8. असभ्य तथा जंगली लोगों में किसकी पूजा की जाती है?

उत्तर: असभ्य तथा जंगली लोग उसी की पूजा करते हैं जिससे उनको भय लगता है।

प्रश्न 9. मनुष्य को अब भूतों तथा पशुओं से भय नहीं लगता। तो फिर वह किससे डरता है?

उत्तर: मनुष्य को अब मनुष्यों से ही कष्ट पहुँचता है। अत: वह मनुष्यों से ही डरता है।

प्रश्न 10. "सभ्यता से अन्तर केवल इतना ही पड़ा है"- सभ्यता से क्या अन्तर आया है?

उत्तर: सभ्यता से अन्तर यह पड़ा है कि दूसरों को छद्म तरीकों से दु:ख दिया जाता है, खुलेआम नहीं ।

प्रश्न 11. सबल तथा निर्बल देशों में क्या प्रक्रिया चल रही है?

उत्तर: सबल तथा निर्बल देशों के बीच अर्थ शोषण की प्रक्रिया चल रही है।

प्रश्न 12. भय से मुक्ति में शील की क्या भूमिका है?

उत्तर: शीलवान पुरुष किसी दूसरे को दु:ख नहीं देते न ही किसी को भयभीत करते हैं।

प्रश्न 13. शक्ति और पुरुषार्थ द्वारा भय से कैसे बचा जा सकता है?

उत्तर: दूसरों को भयभीत करने वालों को शक्ति और पुरुषार्थ प्रकट करके, उनको दण्ड का भय दिखाकर, भय से बचा जा सकता

लघूत्तरात्म क प्रश्न

प्रश्न 1. "क्रोध दुःख के कारण पर प्रभाव डालने के लिए आकुल करता है और भय उसकी पहुँच से बाहर होने के लिए।" इस वाक्य का आशय स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: क्रोध और भय ये दोनों ही मनोविकार हैं। क्रोध तब उत्पन्न होता है जब मनुष्य को पता होता है कि उसको दु:ख किसके कारण पहुँचेगा अथवा पहुँचाना सम्भव है। यदि दु:ख का कारण कोई चेतन प्राणी होगा तथा उसने जान-बूझकर दु:ख पहुँचाया होगा तो क्रोध उत्पन्न होगा।

मनुष्य जब भावी दु:ख के कारण के सामने होता है तो उसके मन में भय उत्पन्न होता है तथा वह उससे बचने के लिए प्रयत्नशील होता है। भय मनुष्य को दु:ख के कारण की पहुँच से दूर रखने के लिए उत्पन्न होता है।

प्रश्न 2. भय का विषय किन दो रूपों में सामने आता है तथा उनमें क्या अन्तर है?

उत्तर: भय का विषय दो रूपों में सामने आता है-एक साध्य तथा दूसरा असाध्य। जब भय का निवारण

प्रयत्न से सम्भव होता है तो उसको प्रयत्न-साध्य विषय कहते हैं। इसके विपरीत जब भय के विषय का प्रयत्न करने पर निवारण न हो अथवा निवारण होने की सम्भावना न हो तो उसको असाध्य कहते हैं।

प्रश्न 3. मनुष्य स्तम्भित कब हो जाता है? तब उसकी शारीरिक दशा कैसी होती है?

उत्तर: जब मनुष्य को किसी भावी दु:ख की अनिवार्यता का निश्चय हो जाता है तथा वह जानता है कि प्रयत्न करके भी उससे बच नहीं सकता तब अपनी अक्षमता और विवशता को अनुभव कर वह स्तम्भित हो जाता है। उस दशा में उसके शारीरिक अंग काम करते और वह कोई निर्णय लेने में असमर्थ हो जाता है।

प्रश्न 4. कायरता किसको कहते हैं? लोगों का इसके सम्बन्ध में क्या विचार है?

उत्तर: भय का भाव भीरुता है। इसको कायरता भी कहते हैं। डरना जब मनुष्य के स्वभाव का अंग बन जाता है अथवा डरपोकपन उसकी आदत बन जाती है तो इसको भीरुता कहते हैं। पुरुषों की भीरुता अथवा कायरता की लोग निन्दा करते हैं किन्तु स्त्रियों की भीरुता रसिक पुरुषों का मनोरंजन करती है। धर्म से डरना धर्म-भीरुता कहलाता है। इसको प्रशंसनीय माना जाता है।

प्रश्न 5. "जीवन के और अनेक व्यापारों में भी भीरुता दिखाई देती है।" लेखक के अनुसार वे व्यापार कौन-कौन-से

उत्तर: शुक्ल जी का कहना है कि जीवन के और अनेक व्यापारों में भीरुता दिखाई देती है। धन की हानि होने के भय से बहुत से व्यापारी किसी विशेष व्यापार में हाथ नहीं डालते ।

हारने तथा अपमानित होने के भय से अनेक पण्डित शास्त्रार्थ से बचने का प्रयास करते हैं। इसमें व्यापारी को अपनी क्षमता तथा व्यापार-कौशल पर विश्वास नहीं रहता। इसी प्रकार पण्डित को अपनी विद्या-बुद्धि पर भरोसा नहीं रहता।

प्रश्न 6. "स्त्रियों की भीरुता तो उनकी लज्जा के समान ही रसिकों के मनोरंजन की वस्तु रही है-इसे कथन पर आधुनिक महिलाओं के सन्दर्भ में अपना विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर: स्त्रियाँ स्वभाव से ही डरपोक होती हैं। उनकी भीरुता निंदनीय नहीं मानी जाती। उनकी भीरुता पुरुषों के विनोद का कारण होती है। आधुनिक महिलाएँ भीरु नहीं होती हैं। आजकल वे पुलिस तथा सेना में भी कार्य कर रही हैं। बदमाशों तथा चोर-लुटेरों से महिलाओं द्वारा लोहा लेने के समाचार अखबारों में छपते ही रहते हैं। समाज में स्त्रियों को भी प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों की समानता प्राप्त है।

प्रश्न 7. धर्म-भीरुता क्या है? क्या आपके मत में वह प्रशंसनीय है?

उत्तर: धर्म भीरुता का अर्थ है धर्म से भयभीत होना। भीरुता को मनुष्य का अवगुण माना जाता है तथा उसकी निन्दा होती है। किन्तु धर्म भीरुता से प्रशंसा होती है। वह मनुष्य का सद्‌गुण माना जाता है।

मेरे विचार से धर्म से नहीं अधर्म से डरना उचित है। अतः इसको अधर्म भीरुता कहना अधिक ठीक है। मेरे

मत में धर्म की प्रेरणा तो अनेक महापुरुषों तथा धार्मिक ग्रन्थों द्वारा दी गई हैं। अत: धर्म भीरुता की नहीं, अधर्म भीरुता की प्रशंसा होनी चाहिए।

प्रश्न 8. आशंका किसको कहते हैं? सोदहारण स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: आशंका में निश्चय कम तथा सम्भावना अधिक होती है। दु:ख अथवा आपत्ति का पूर्ण निश्चय न रहने पर उसकी सम्भावना के अनुमान से जो आवेग रहित भय होता है, उसको आशंका कहते हैं। जंगल के रास्ते पर जाते हुए कोई पथिक सोचे कि मार्ग में कोई चीता भी मिल सकता है किन्तु पूर्ण निश्चय के अभाव में वह मार्ग पर चलता रहे। माने नहीं तो उसके मन का यह भाव आशंका कहा जाएगा।

प्रश्न 9. "जंगली मनुष्यों में परिचय का विस्तार बहुत थोड़ा होता है। इसका क्या तात्पर्य है तथा इसका क्या परिणाम होता है?

उत्तर: जंगली मनुष्यों में परिचय का विस्तार बहुत थोड़ा होता है। इसका अर्थ यह है कि वे केवल अपने कबीले तथा आस-पास के लोगों को ही जानते हैं। दूर रहने वाले मनुष्यों को वे नहीं जानते। इसका परिणाम यह होता है कि अपरिचित लोगों से उनमें भयभीत होने की भावना होती है। किसी अपरिचित के मिलने पर भागकर उस समय अथवा सदा के लिए अपनी रक्षा कर लेते हैं।

प्रश्न 10. भय किन-किन में अधिक पाया जाता है?

उत्तर: भये बच्चों में अधिक पाया जाता है। किसी अपरिचित को देखकर वे तुरन्त घर में घुस जाते हैं। पशुओं में भी भय बहुत पाया जाता है। इसके अतिरिक्त असभ्य तथा जंगली लोगों में भी भय का प्रभाव अधिक होता है।

प्रश्न 11. परिचित व्यक्तियों के प्रति मनुष्य की धारणा कैसी होती है?

उत्तर: परिचित व्यक्तियों के प्रति मनुष्य की धारणा उस पर विश्वास करने की होती है। जैसे-जैसे परिचय बढ़ता है वैसे-वैसे ही यह धारणा मजबूत होती चली जाती है। बचपन में हम अपने माता-पिता तथा प्रतिदिन सम्पर्क में आने वाले कुछ थोड़े से ही व्यक्तियों पर विश्वास करते हैं। हमारी धारणा यह होती है कि वे हमको हानि अथवा दु:ख नहीं पहुँचाएँगे।

प्रश्न 12. "समस्त मनुष्य जाति की सभ्यता के विकास का यही क्रम रहा है' -भय के सन्दर्भ में शुक्ल जी के इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: असभ्य तथा जंगली जातियों में भय अधिक होता है। उनको अपरिचित तथा अज्ञात लोगों और वस्तुओं से दु:ख पहुँचने का डर रहता है। मनुष्य में ज्ञान, शरीर तथा मन की शक्ति के बढ़ने से वह स्वयं को दु:ख से दूर रखने में समर्थ होता है।

उसका अनेक मनुष्यों तथा नवीन वस्तुओं के सम्पर्क में आने का अभ्यास बढ़ता है। ऐसी स्थिति में उनके प्रति भय का भाव भी कम हो जाता है। इस प्रकार सभ्यता के विकास के साथ भय भी कम होता जाता है।

प्रश्न 13. सभ्यता का विकास होने से पूर्व मनुष्य को कैसा भय रहता था, जो अब नहीं है? इस सम्बन्ध में आपका क्या कहना है?

उत्तर: सभ्यता के वर्तमान रूप से पहले मनुष्य को यह भय रहता था कि कोई जबरदस्ती उसके खेत-मकान, रुपया-पैसा, सम्पत्ति आदि छीन लेगा। लूट, चोरी, डकैती का भय लोगों को रहता था। आज सभ्यता के विकसित होने पर लोगों को इस भय से मुक्ति मिल गई है।

प्रशासन तथा पुलिस की व्यवस्था ने इस प्रकार का भय कम कर दिया है। इस प्रकार का भय पूर्णतः निर्मूल हो गया है। ऐसा मैं नहीं मानता, आज भी लूट, डकैती, रोड हेल्ड अप आदि की अनेक घटनाएँ होती हैं।

प्रश्न 14. आजकल मनुष्य को किनके भय से मुक्ति मिल गई है तथा किनसे भये अभी तक बना हुआ है?

उत्तर: आजकल मनुष्यों को भूतों के भय से मुक्ति मिल गई है। पशुओं का भय भी उसको नहीं है। किन्तु मनुष्य को मनुष्य से भी अभी भी बना हुआ है। इस भय से मुक्त होने की कोई लक्षण भी दिखाई नहीं देता है। अब मनुष्य के दु:ख का कारण मनुष्य ही है। जैसे-जैसे आधुनिकता बढ़ रही है, उसी अनुपात में मनुष्य से मनुष्य में भय की वृद्धि भी हो रही है।

प्रश्न 15. "उसका (भय का) क्षोभ कारक रूप बहुत-से आवरणों के भीतर ढक गया है।" भय का क्षोभकारक रूप क्या है? वे आवरण कौन-से हैं जिनमें उसका क्षोभकारक रूप ढक गया है?

उत्तर: कोई आकर जबरदस्ती किसी का खेत, बाग-बगीचा, घर-मकान, रुपया-पैसा आदि छीन ले। यह भय का क्षोभकारक रूप है। सुदृढ़ शासन-व्यवस्था के अभाव में पहले यह भय बना रहता था। भय के इस रूप पर छल-कपट तथा बनावटी आचरण का पर्दा पड़ गया है। यह पर्दा या आचरण है-नकली दस्तावेज तैयार कराकर, झूठे गवाह प्रस्तुत करके, अदालतों में जिरह करके इन वस्तुओं के स्वामित्व से किसी को वंचित कर देना।

प्रश्न 16. सबल देशों के बीच कैसा संघर्ष चल रहा है?

उत्तर: आजकल दो शक्तिशाली देशों के मध्य आर्थिक संघर्ष चल रहा है। सभी देश अपने यहाँ उत्पादित माल का निर्यात अन्य देशों में करके धनवान बनना चाहते हैं। इस स्पर्धा में दोनों के मध्य अनेक बार लड़ाई-झगड़े की स्थिति उत्पन्न हो जाती है तथा दूसरे देशों के बाजार पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए वे एक-दूसरे से टकराते हैं।

प्रश्न 17. "सबल और निर्बल देशों के बीच अर्थशोषण की प्रक्रिया अनवरत चल रही है।" कैसे? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: शक्तिशाली देश निर्बल देशों के बाजार पर एकाधिकार चाहते हैं। वे उस देश में अपना उत्पादित सामान निर्यात करते हैं। और अपनी शर्तों पर उसके साथ व्यापार करते हैं। उससे सस्ता कच्चा माल और श्रम खरीदते हैं तथा अपना महँगी उत्पाद उसको बेचते हैं। इस तरह शक्तिशाली देश निर्बल देशों का आर्थिक शोषण करते हैं। यह प्रक्रिया निरन्तर बिना रुके चल रही है।

प्रश्न 18. "सार्वभौम वणिग्वृत्ति" से लेखक का क्या आशय है?

उत्तर: वणिक व्यापारी को कहते हैं। आजकल विश्व के समस्त देश व्यापारी बन चुके हैं। वे अपने यहाँ के कल-कारखानों में तैयार माल को दूसरे देशों के बाजारों में बेचते हैं। इसके कारण उनमें गहरी स्पर्धा होती है तथा वे निर्बल देशों का शोषण करते हैं। इसी को "सार्वभौम वणिग्वृत्ति" कहा गया है।

प्रश्न 19. शुक्ल जी के कथन "इस सार्वभौम वणिग्वृत्ति से उसका अनर्थ कभी न होता, यदि क्षात्रवृत्ति उसके लक्ष्य से अपना लक्ष्य अलग रखती।" का आशय क्या है? क्षात्रवृत्ति से क्या तात्पर्य है?

उत्तर: क्षात्रवृत्ति से तात्पर्य है क्षत्रिय का धर्म अर्थात् सुशासन । अनुचित प्रवृत्तियों के नियन्त्रण में रखना ही शासन-सत्ता का कर्तव्य है। यदि देशों की शासन-सत्ताएँ विभिन्न देशों में व्याप्त आर्थिक स्पर्द्ध तथा शोषण में सहयोग न करतीं और उनको नियन्त्रण में रखतीं तो संसार में होने वाले निर्धन देशों के शोषण, उत्पीड़न तथा उनमें व्याप्त निर्धनता को रोका जा सकता था।

प्रश्न 20. "अर्थोन्माद को शासन के भीतर रखने से शुक्ल जी का क्या तात्पर्य है?

उत्तर: अर्थोन्माद का अर्थ है- धन सम्बन्धी पागलपन। आजकल समस्त संसार के देश तथा लोग धन कमाने के लिए पागल बने हुए हैं। अर्थ उपार्जन के लिए वे उचित-अनुचित, नैतिक-अनैतिक आदि सभी तरीकों को ठीक मानते हैं।

तरीका कोई भी हो बस धन कमाना ही उनका लक्ष्य है। इस अनुचित स्पर्धा पर नियन्त्रण आवश्यक है। इसको नियन्त्रण में रखने से ही संसार को अनाचार और अनावश्यक संघर्ष से बचाया जा सकता है।

प्रश्न 21. संसार में प्रत्येक प्राणी को क्या अधिकार है?

उत्तर: संसार में प्रत्येक प्राणी को अधिकार है कि वह सुखी रहे। उसको यह भय न हो कि कोई उसके सुख में बाधा डालेगा। इस प्रकार निर्भय रहकर ही मनुष्य सुखी रह सकता है। यदि उसको भय रहेगा कि कोई उसको दु:खी कर सकता है तो वह सुखी रहने की बात सोच भी नहीं सकता।

प्रश्न 22. 'सुखी रहने' तथा 'मुक्तातंक होने में क्या सम्बन्ध है? क्या आपकी दृष्टि में आतंकित होकर भी मनुष्य सुखी रह सकता है?

उत्तर: हमारी दृष्टि में आतंकित होकर कोई मनुष्य सुखी नहीं रह सकता सुखी रहने के लिए उसका मुक्तातंक अर्थात् आतंक से मुक्त होना जरूरी है। यदि उसको अपने और अपने परिवार के जीवन, अपनी सम्पत्ति आदि के सम्बन्ध में किसी प्रकार का भय रहेगा तो वह सुखी नहीं रह सकता।

प्रश्न 23. सुखी और निर्भय रहनी प्रयत्न साध्य क्यों हैं?

उत्तर: संसार में इतनी आपा-धापी तथा अनावश्यक प्रतिस्पर्धा व्याप्त है कि विश्व का वातावरण भय से भरा हुआ है। ऐसे वातावरण में कोई न सुखी रह सकता है और न निर्भय ही रह सकता है। इसके लिए प्रयत्न करके संसार में निर्भयता का वातावरण बनाना होगा तभी लोगों को सुख प्राप्त हो सकेगा।

प्रश्न 24. निर्भयता के लिए कौन-सी दो बातें अपेक्षित हैं?

उत्तर: निर्भयता के सम्पादन के लिए दो बातें अपेक्षित हैं-

1. हमसे किसी को भय न हो। हम किसी को दु:ख न पहुँचाएँ। इसके लिए समाज में शील और शिष्टाचार का होना आवश्यक
2. किसी में इतना साहस न हो कि वह हमें दु:ख दे सके और डरा सके। इसके लिए शक्ति तथा पुरुषार्थ का होना जरूरी है। दूसरों को सताने और डराने वाले में कानून का भय पैदा किया जाना चाहिए।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. "तब हमारा काम दुःख मात्र से नहीं चल सकता, बल्कि भागने या बचने की प्रेरणा करने वाले भय से चल सकता है।"-उपर्युक्त के आधार पर बताइए कि भये क्या है तथा उसकी हमारे जीवन में क्या उपयोगिता है?

उत्तर- मनुष्य के जीवन में सुख और दु:ख मूल प्रवृत्तियाँ हैं। अनेक मनोविकार इनसे सम्बन्धित हैं। 'भय' नामक मनोविकार दु:खात्मक संवर्ग का भाव है। जिस पर मनुष्य का वश न हो किसी ऐसे कारण से होने वाले भावी अनिष्ट के निश्चय से जो दु:ख होता है, उसको भय कहते हैं। भय के लिए कोई कारण निर्दिष्ट होना आवश्यक नहीं है। केवल इतना पता होना पर्याप्त है कि दु:ख होगा अथवा हानि होगी। भय एक प्रकार का आवेगपूर्ण अथवा स्तम्भक मनोविकार है।

मनुष्य के लिए किसी भावी आपदा की भावना अथवा दु:ख के कारण का जाननी ही पर्याप्त नहीं है। उसके कारण उसके मन में भय के भाव का उत्पन्न होना भी आवश्यक है। भय की मनुष्य के जीवन में भारी उपयोगिता है। दु:ख के कारण से बचने में, उसको दूर हटाने में अथवा उससे भागकर अपनी रक्षा करने में भय ही प्रेरणास्रोत होता है।

हमारे मन में उत्पन्न भय हमें बताता है कि दु:ख से किस प्रकार बच सकते हैं। दो व्यक्तियों को अचानक शेर की दहाड़ सुनाई देती है। शेर के आने से उनको हानि हो सकती है। इससे उनके मन में भय उत्पन्न होता है, जो उनको वहाँ से भागने अथवा पेड़ पर चढ़कर अपनी रक्षा करने की प्रेरणा देता है। यद्यपि शेर का यहाँ आना अनिवार्य नहीं है। वे दोनों अपने प्रयास द्वारा उससे बच सकते हैं।

जब मनुष्य स्वयं को संकट को टालने में असमर्थ या विवश समझता है तो संकट अनिवार्य हो जाता है। साहस का अभाव तथा आपत्तियों को दूर करने का अभ्यास न होने पर मनुष्य स्तम्भित हो जाता है। फलत: उसके हाथ-पैर भी नहीं हिलते। तब दु:ख अनिवार्य हो जाता है। यहाँ भये का असाध्य रूप दिखाई देता है।

प्रश्न 2. दो व्यक्ति पहाड़ी, नदी के किनारे बैठकर प्रसन्नतापूर्वक बातें कर रहे हैं। सामने से आने वाली सिंह की दहाड़ सुनकर वे उठकर पेड़ पर चढ़ जाते हैं। उनको पेड़ पर चढ़ने की प्रेरणा देने वाला मनोविकार कौन-सा है? यदि वह चुपचाप बैठे बातें करते रहें और भागें नहीं तो इस मनोविकार को क्या कहेंगे? दोनों को अन्तर स्पष्ट करें।

उत्तर: दो व्यक्ति एक पहाड़ी नदी के किनारे बैठकर प्रसन्नतापूर्वक बातें कर रहे हैं। यकायक उनको शेर के गई है। है। वे तुरन्त उठकर एक पेड़ पर चढ़ जाते हैं। इस उदाहरण में उनको पेड़ पर चढ़ने की प्रेरणा देने वाला भाव भय है। किसी भी आप की भावना अथवा दु:ख के कारण सामने आने पर हमारे मन में जो एक प्रकार का आवेगपूर्ण या स्तम्भित करने वाला मनोविकार उत्पन्न होता है, वह भय कहलाता है।

भय के लिए कारण का निर्दिष्ट होना आवश्यक नहीं होता। इतना पता चलते ही कि हमको कष्ट पहुँचेगी, भय उत्पन्न होता है। यह भय का प्रयत्न साध्य अथवा निवारणीय स्वरूप है। यदि उनको पेड़ पर चढ़ना नहीं आता तो अपनी विवशता और अक्षमता के कारण वे स्तम्भित हो जाते उनको कोई उपाय नहीं सूझता। यह भय असाध्य रूप है। साहसी व्यक्ति शीघ्र भयभीत नहीं होता। भय होने पर वह बचने का उपाय करता है।

यदि वे दोनों उठकर भागें नहीं और उसी प्रकार बातें करते रहें तो इसको आशंका कहेंगे। जब दुःख को पूर्ण निश्चय नहीं होता और उसकी संभावना का अनुमान ही लगाया जाता है तो उससे उत्पन्न भय.में आवेग नहीं होता। इस आवेग शून्य भय को आशंका कहते हैं।

यदि वे दोनों सोचते कि आने वाली आवाज शायद शेर की हो, तो वे वहाँ उसी प्रकार बातें करते रहते और उनके मन में पेड़ पर चढ़ने की व्यग्रता दिखाई नहीं देती। भय में आवेग की तीव्रता और गहराई होती है किन्तु आशंका में आवेगशून्यता, सम्भावना का अनुमान और गम्भीरता का अभाव होता है। उसमें असली भय न होकर भय के कारण की कल्पना मात्र होती है।

प्रश्न 3. भीरुता किसको कहते हैं? पुरानी प्रकृति की और नवीन तरह की भीरुता का विश्लेषण कीजिए।

उत्तर: स्वभावगत भय को भीरुता कहते हैं। भय की आदत बन जाने पर उसको भीरुता कहा जाता है। इसको कायरता भी कहते हैं। भीरुता स्त्री-पुरुष दोनों में पाई जाती है। पुरुषों को स्वाभाविक रूप से साहसी माना जाता है। उनकी भीरुता निंदनीय होती है परन्तु स्त्रियों की भीरुता रसिकों के मनोरंजन का विषय होती है।

भीरु व्यक्ति में कष्ट सहने की क्षमता नहीं होती तथा उस कष्ट से मुक्ति का पूर्ण विश्वास भी उसको नहीं होता। भूतों से डरना तथा पशुओं से डरना भी भीरुता है। भीरुता निंदनीय होती है किन्तु धर्म भीरुता प्रशंसनीय मानी जाती है। इसको पुरानी चाल की भीरुता कह सकते हैं।

भीरुता नवीन प्रकार की भी होती है। यह जीवन के अन्य अनेक व्यापारों में दिखाई देती है। इस प्रकार की भीरुता में सहन करने की क्षमता और अपनी शक्ति में अविश्वास छिपा रहता है। कोई व्यापारी कभी-कभी किसी नई वस्तु का व्यापार शुरू नहीं करता।

उसको इसमें आर्थिक हानि होने का भय लगता है। यह व्यापारी की भीरुता है। उसमें आर्थिक नुकसान को सहने की क्षमता तथा अपने व्यापार कौशल पर अविश्वास होता है। इसी प्रकार कोई विद्वान पुरुष जब अपने विद्या-बुद्धि की शक्ति पर अविश्वास होने के कारण और मानहानि के डर से किसी के साथ शास्त्रार्थ से बचता है तो इसको उसकी भीरुता ही माना जाएगा। ये नवीन प्रकार की भीरुता के रूप हैं।

प्रश्न 4. असभ्य तथा जंगली जातियों में भय अधिक होता है क्यों? उनके समाज में देवताओं की पूजा में भये की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

उत्तर: असभ्य और जंगली जातियों में भय अधिक होता है। जंगली लोगों का परिचय-क्षेत्र बहुत सीमित होता है। ऐसी अनेक जातियाँ हैं जिनमें कोई व्यक्ति 20-25 से अधिक लोगों को नहीं जानता। उसे दस-बारह कोस दूर रहने वाला कोई जंगली मिल जाए और उसको मारने दौड़े तो वह दौड़कर अपनी रक्षा कर लेता है। यह रक्षा तत्कालीन तथा सर्वकालीन भी हो सकती है। परिचय का सीमित होना ही उनके भय का कारण होता है।

जंगली जातियों में भय की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। वे जिससे डरते हैं, उससे रक्षा के लिए ही उसका सम्मान भी करते हैं। उनके देवता भय के कारण ही कल्पित होते हैं। वे कष्ट से रक्षा के लिए किसी शक्ति की कल्पना कर लेते हैं तथा उसकी पूजा करते हैं और उससे प्रार्थना करते हैं कि वह उनको कष्ट से बचाए।

भय और भय उत्पन्न करने वाले का सम्मान करना असभ्यता का सूचक है। पूजा-पद्धति के जन्म में भी भय की भावना का प्रमुख स्थान है। देवता शक्तिशाली होते हैं तथा वे किसी को भी पीड़ा पहुँचा सकते हैं। इस पीड़ा से बचने के लिए ही उनका सम्मान किया जाता है। उनको प्रसन्न रखा जाता है तथा उनकी पूजा की जाती है। यही कारण है कि सभ्यता और शिक्षा के विकास के साथ धर्म के प्रति लोगों की रुचि कम होती जा रही है।

प्रश्न 5. "अपरिचित से भय में जीवन का कोई गूढ़ रहस्य छिपा जान पड़ता है।" इस कथन का तर्कपूर्ण समर्थन कीजिए।

उत्तर: अपरिचित से भय में जीवन का कोई गूढ़ रहस्य छिपा जान पड़ता है। जंगली जातियों में परिचय का क्षेत्र विस्तृत नहीं होता। वे अपरिचित लोगों से डरते हैं। बच्चों में भी अपरिचित लोगों से भय होने का भाव पाया जाता है। वे धीरे-धीरे भय मुक्त होते हैं तथा अपने माता-पिता तथा नित्य सामने आने वाले थोड़े-से लोगों से ही घुल-मिल जाते हैं।

अपरिचित व्यक्ति को देखकर वे घर में घुस जाते हैं। पशुओं में भी अपरिचित से भय का भाव पाया जाता है। पालूत जानवर की अपेक्षा दूसरे जानवर अधिक डरते हैं। वो किसी मनुष्य को सामने पाकर भाग जाते हैं अथवा उस पर हमला कर देते हैं।

धर्म में भी अपरिचित के प्रति भय पाया जाता है। धर्म में जिनको सम्माननीय और पूज्य माना जाता है, वे शक्तियाँ अज्ञात और अपरिचित ही होती हैं। उनकी दण्ड देने और पीड़ित करने की शक्ति से भय होने के कारण ही लोग उनकी पूजा-स्तुति करके उनको प्रसन्न रखते हैं और उनके कोप से बचना चाहते हैं।

धार्मिक देवता रहस्यपूर्ण होते हैं। अज्ञात शक्ति के भय से अपनी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए ही उनकी पूजा की जाती है। पूजा की भावना के पीछे उनके प्रति आभार की भावना भी है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री लॉक ने ईश्वर को भी इसी कारण मानव कल्पित माना है।

प्रश्न 6. “अब मनुष्यों के दुःख का कारण मनुष्य ही है।” शुक्ल जी के इस कथन में अन्तर्निहित भाव स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: पहले जब सभ्यता और शिक्षा का लोगों के बीच प्रसार नहीं हुआ था, तब मनुष्य को अनेक अपरिचित प्राणियों से कष्ट मिलने का भय सताता था ! असभ्य तथा आरक्षित लोग अधिक डरते हैं। जंगली और असभ्य लोग अपरिचित मनुष्य से भी डरते हैं। उनसे सताये जाने की भावना उनके मन में विद्यमान होती है।

पहले लोग कुछ कल्पित शक्तियों से डरते थे। भूत-प्रेतों का डर असभ्य तथा अशिक्षित लोगों में पाया जाता था।धर्म के कल्पित देवताओं की शक्ति भी उन्को दु:ख का कारण लगती थी और वे उनसे डरते थे। पशुओं से भी पहले के लोग भयभीत होते थे।

अब सभ्यता के विकास के साथ स्थिति बदल चुकी है। अब लोगों में भूतों के प्रति भय प्राय: नहीं रहा है। पशुओं से भी वह अब नहीं डरते। अब तो धार्मिक देवी-देवताओं से भी उनको डर नहीं लगता। अब लोग यदि किसी से डरते हैं तो वह मनुष्य ही है।

मनुष्यों के दु:ख का कारण अब मनुष्य ही है मनुष्य दूसरे मनुष्य, एक जाति दूसरी जाति तथा एक देश दूसरे देश को पीड़ित करता है तथा उसका शोषण करता है। मनुष्य को जबरदस्ती अपनी सम्पत्ति छीने जाने का भय तो नहीं रहा है परन्तु कानूनी दाव पेच अपनाकर अपनी सम्पत्ति से वंचित किए जाने का भय अब मनुष्य में बढ़ गया है। सबल देशों द्वारा निर्बल देशों का शोषण होने से भी मनुष्य के प्रति भय का भाव पनपता है।

आज मनुष्य ही दूसरे मनुष्य को दु:ख पहुँचाता है। वही मनुष्य के दु:ख का कारण है। यही शुक्ल जी के कथन में अन्तर्निहित भाव है।

प्रश्न 7. “इस सार्वभौम वणिग्वृत्ति से उसका अनर्थ कभी न होता यदि क्षात्रवृत्ति उसके लक्ष्य से अपना लक्ष्य अलग रखती’ -विश्व में व्याप्त अर्थ संघर्ष के वातावरण की पृष्ठभूमि में शुक्ल जी के इस कथन पर टिप्पणी कीजिए।

उत्तर: व्यापार धन कमाने के साधन के रूप में सदैव ही मान्य रहा है। लोगों की आवश्यकता की वस्तुएँ उनको उपलब्ध कराकर लाभ कमाना ही व्यापार या व्यवसाय है। वणिग्वृत्ति का अर्थ मानव हितैषी नैतिक व्यापार द्वारा धनोपार्जन ही है। वणिक व्यापारी को कहते हैं। व्यापार करने में कोई दोष नहीं है किन्तु आज व्यापार का रूप बदल चुका है।

आज संसार में पूँजी एक शक्ति का रूप ले चुकी है। व्यापार में पूँजी लगाकर अधिक-से-अधिक लाभ कमाना विश्वव्यापी रूप धारण कर चुका है। पूँजीपति सस्ता श्रम खरीदकर, व्यवस्थापक को बुद्धि कौशल खरीदकर, गरीब देशों के बाजारों पर कब्जा करके अपने कारखानों में उत्पादित माल को बेचता है और धनवान बनता है।

इससे विश्व में एक ओर अमीरों की संख्या बढ़ रही है तो दूसरी ओर निर्धनता में तेजी से वृद्धि हो रही है। शोषण बढ़ रहा है। यही पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था है जो सार्वभौमिक विश्वव्यापी अर्थव्यवस्था के लिए शुक्ल जी द्वारा प्रयुक्त एक साहित्यिक शब्द है।

विद्वान लेखक के कथन का आशय यह है कि पूँजीवादी शोषण पर नियन्त्रण हो सकता था, विश्व में बढ़ते हुए अमीरी-गरीबी के असन्तुलन को रोका जा सकता था। यदि राष्ट्रों की सरकारें शासन की आदर्श नीति को अपनातीं। वे शोषण करने वालों को रोकतीं तथा उनको अनुचित आचरण के लिए दण्डित करतीं ।

परन्तु दुर्भाग्यवश आज पूरे कुएँ में ही भाँग घोल दी गई है। सरकारें भी पूँजीपतियों का सहयोग करती हैं। उनको मुफ्त और सस्ती भूमि, बिजली, बैंकों से सस्ते ऋण आदि सुविधाएँ देती हैं, श्रमिकों के अधिकारों पर रोक लगाती हैं तथा कर्मचारियों से कम वेतन पर अधिक काम लेने देती हैं। क्षात्रवृत्ति अर्थात् शासन प्रशासन भी पूँजीपतियों के आर्थिक शोषण के लक्ष्य में सहयोगी बन गया है। दोनों की मिलीभगत से जनता का शोषण हो रहा है।

प्रश्न 8. "अतः उसके प्रयत्नों को या भय संचार द्वारा रोकने की आवश्यकता से हम बच नहीं सकते।' शुक्ल जी किसके प्रयत्नों को भय संचार द्वारा रोकने की आवश्यकता जता रहे हैं? वर्तमान समाज में भय संचार की क्या व्यवस्था है?

उत्तर: संसार में प्रत्येक व्यक्ति को सुखी तथा निर्भय रहने का अधिकार है। निर्भयता बनाये रखने के दो उपाय हैं। पहला, यह कि हम किसी को दुःख न दें। यह शील के अन्तर्गत है। दूसरा, यह कि सज्जनों को दुःखी करने तथा डराने वालों को दण्ड का डर दिखाकर भयभीत किया जाये। इसके लिए पुरुषार्थ तथा शक्ति अपेक्षित है।

इस संसार में किसी को न डराने से भय की सम्भावना से नहीं बचा जा सकता। संसार में कुछ ऐसे दुष्ट व्यक्ति होते हैं कि उनका स्वभाव दूसरों को सताने का ही होता है। उनको ऐसा करने से समझा-बुझाकर नहीं रोका जा सकता। उनको रोकने के लिए बल प्रयोग की आवश्यकता होती है। शक्तिशाली पराक्रमी मनुष्य ही उनको रोक सकते हैं।

उनके दूसरों को दुःख देने के प्रयत्नों को उनमें दण्ड का भय पैदा करके ही रोका जा सकता है। शुक्ल जी दुष्ट व्यक्तियों में यह भय पैदा करने के लिए कह रहे हैं कि यदि वे दूसरों को दुःख देंगे तो उनको दण्ड मिलेगा। उनमें दण्ड का भय पैदा होगा तभी वे दूसरों को दुखी करने के प्रयासों से विरत होंगे।

आज संसार के सभी देशों के समाज में दुष्टों में भय संचार की व्यवस्था है। आतंकवादी देशों को सेना द्वारा तथा दुष्ट अपराधी व्यक्तियों को पुलिस बल द्वारा नियन्त्रित किया जाता है। इस प्रकार संसार में निर्भयता का वातावरण बनाने का प्रयास किया जाता है।

भय लेखक-परिचय

प्रश्न- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का जीवन-परिचय देते हुए उनकी साहित्य-साधना पर प्रकाश डालिए।

उत्तर- जीवन परिचय-आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का जन्म सन् 1884 ई. में उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के अगोना नामक गाँव में हुआ था। आपके पिता पं. चन्द्रबली शुक्ल सुपरवाइजर कानूनगो थे। शुक्ल जी ने मिर्जापुर के मिशन स्कूल से एंट्रेन्स परीक्षा पास की। कायस्थ पाठशाला इलाहाबाद में प्रवेश लिया किन्तु एफ.ए. (इण्टर) करने से पूर्व ही पढ़ाई छूट गई। सरकारी नौकरी शुरू की परन्तु उसको आत्मसम्मान के विरुद्ध पाकर छोड़ दिया और मिर्जापुर के मिशन स्कूल में ड्राइंग मास्टर हो गए। तत्पश्चात् स्वाध्याय द्वारा

हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, बंगला आदि भाषाओं का गम्भीर ज्ञान प्राप्त किया। आपने काशी नागरी प्रचारिणी सभा से जुड़कर 'हिन्दी शब्द सागर' का सम्पादन किया। बाद में आप बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग में प्राध्यापक तथा विभागाध्यक्ष रहे। सन् 1941 में आपका देहावसान हो गया।

साहित्यिक परिचय-

शुक्ल जी की पहली प्रकाशित रचना 'मनोहर छटा' नामक कविता थी। बाद में आपका रुझान गद्य-लेखन की ओर हुआ। आपने हिन्दी गद्य में निबन्ध, समालोचना आदि विधाओं में प्रशंसनीय योगदान दिया। आपके मनोविकार सम्बन्धी निबन्ध हिन्दी में अद्वितीय हैं।

समालोचना के क्षेत्र में भी आपने मौलिक कृतियों की रचना कर उसे नई दिशा दी है। आपने हिन्दी साहित्य का प्रथम प्रामाणिक इतिहास भी लिखा है। आपकी 'चिन्तामणि भाग-1' को मंगला प्रसाद पारितोषिक प्राप्त हो चुका है।

- कृतियाँ-निबन्ध-संग्रह-'चिन्तामणि भाग 1 तथा-2' कथा-विचारवीथी'।
- समालोचना-सूरदास', 'रस-मीमांसा', त्रिवेणी (इसमें सूर, तुलसी, जायसी पर लिखी आलोचनाएँ संग्रहीत हैं)
- सम्पादन-"तुलसी ग्रन्थावली', 'जायसी ग्रन्थावली', हिन्दी शब्द सागर', 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका'।
- इतिहास-हिन्दी साहित्य का इतिहास॥
- अन्य-अभिमन्यु वध (काव्य), 'ग्यारह वर्ष का समय' (कहानी) 'मेगस्थनीज का भारतवर्षीय विवरण', 'आदर्श जीवन', 'कल्पना का आनन्द', विश्व प्रबन्ध', 'बुद्ध चरित (काव्य) आदि अनूदित रचनाएँ हैं।

शुक्ल जी की भाषा तत्सम शब्द प्रधान, परिमार्जित, गम्भीर, सजीव तथा प्रवाहमयी है। आपने वर्णनात्मक, गवेषणात्मक, भावात्मक, हास्य-व्यंग्यात्मक तथा समीक्षात्मक शैलियों को अपने लेखन में अपनाया है।

भय पाठ-सार

प्रश्न- आचार्य शुक्ल द्वारा रचित 'भय' शीर्षक निबन्ध का सारांश लिखिए।

उत्तर- परिचय-' भय' आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा विरचित मनोविकारों से सम्बन्धित एक निबन्ध है। शुक्ल जी के चिन्तामणि' नामक निबन्ध-संग्रह में उत्साह, करुणा, श्रद्धा-भक्ति, क्रोध आदि निबन्ध संग्रहीत हैं। उनमें से ही ' भय' भी एक है।

भय का भाव-किसी भावी आपदा की भावना या दु:ख के कारण के सामने आने पर जो आवेगपूर्ण तथा स्तम्भित करने वाला मनोविकार उत्पन्न होता है, उसको 'भय' कहते हैं। क्रोध और भय दोनों दु:ख के कारण से सम्बन्धित हैं। दु:ख के कारण का स्वरूप बोध क्रोध उत्पन्न करता है। भय उससे बचने का प्रेरक होता है। भय के लिए दु:ख का कारण जानना जरूरी नहीं होता। दु:ख या हानि होने का आभास होते ही भय उत्पन्न

होता है। भय के दो रूप हैं-साध्य और असाध्य। जो प्रयत्न करने पर दूर हो सके वह साध्य तथा प्रयत्न करने पर भी जिससे बचा न जा सके वह असाध्य विषय है। किसी विषय के साध्य अथवा असाध्य होने की धारणा परिस्थिति या मनुष्य की प्रकृति पर अवलम्बित होती है।

जो मनुष्य साहसी नहीं होता अथवा कठिनाइयों से संघर्ष करने का अभ्यस्त नहीं होता, वह दु:ख के कारण को अपरिहार्य मानकर भय के कारण स्तम्भित हो जाता है। किन्तु साहसी पुरुष भय से बचने के लिए प्रयत्नशील हो जाता है।

भीरुता या कायरता-भय का सामना न कर उससे बचने के लिए भागना जब मनुष्य की आदत बन जाती है तो उसे भीरुता या कायरता कहते हैं। इसमें कष्ट सहन करने की क्षमता में अविश्वास ही प्रधान कारण है। यह भीरुता का बहुत पुराना रूप है। अर्थ हानि की आशंका से व्यापारी किसी विशेष व्यापार में हाथ नहीं डालते तथा हारने पर मानहानि के डर से कुछ पण्डित शास्त्रार्थ से दूर रहते हैं।

यद्यपि स्त्रियों की भीरुता रसिकों के आनन्द का विषय होती है। पुरुषों की भीरुता सदैव निन्दनीय होती है। कुछ लोग धर्म भीरुता को प्रशंसनीय मानते हैं। किन्तु धर्म से डरने वालों की अपेक्षा धर्म की ओर आकर्षित होने वाले प्रशंसा के पात्र अधिक हैं।

आशंका और आशा-दु:ख का पूर्ण निश्चय न होने पर उसकी सम्भावना मात्र के अनुमान से उत्पन्न होने वाले आवेग रहित भय को आशंका कहते हैं। आशंका का संचार धीमा किन्तु अधिक समय तक स्थायी रहता है। दु:ख के वर्ग वाले भावों में जो स्थिति आशंका की है वही सुख के वर्ग के भावों में आशा की है।

वन के रास्ते में चीता मिलने की आशंका पर यात्री चलता रह सकता है, परन्तु इसके निश्चय में बदलने पर पूर्ण भय की दशा में वह पीछे लौट जाएगा अथवा वहीं रुक जाएगा।

भय का स्थायित्व और उससे रक्षा-संज्ञान प्राणियों तथा सभ्य समाज के लोगों में भय का फल भय के संचार काल तक ही रहता है। वहाँ भय के द्वारा स्थायी सुरक्षा सम्भव नहीं होती। असभ्य तथा जंगली लोगों में भय से सुरक्षा अधिक समय तथा स्थान तक होती है।

जंगली तथा असभ्य लोगों में भय अधिक होता है। वे जिससे भयभीत होते हैं, उसकी पूजा करते हैं। उनके देवता भय के भाव से ही बनते हैं। डराने वाले का सम्मान असभ्यता का लक्षण है। भारत में इसी कारण किसी विद्वान की अपेक्षा थानेदार का सम्मान अधिक होता है।

भय से मुक्ति-बच्चों में तथा पशुओं में भय का भाव अधिक पाया जाता है। बच्चे किसी अपरिचित को देखते ही घर के भीतर भागते हैं। अज्ञात तथा अपरिचित से भय प्रत्येक प्राणी में होता है। इनका निवारण मनुष्य अपने ज्ञानबल तथा बाहुबल से करता है।

सभ्यता के विकास के साथ भय कम होता जाता है। भूतों का डर तथा पशुओं का डर तो अब कम हो गया है किन्तु मनुष्य का भय मनुष्य को अभी तक बना हुआ है। मनुष्य ही मनुष्य को दु:ख देता है। सभ्यता के विकास के साथ ही दु:ख पहुँचाने के तरीके भी बदल गए हैं। अब किसी के द्वारा बलात् धन-सम्पत्ति छीने जाने की आशंका तो कम हो गई है किन्तु नकली दस्तावेजों, झूठे गवाहों तथा कानूनी दाँव-पेंच के बल पर इन चीजों को छीने जाने की सम्भावना बढ़ गई है। आज जाति तथा देशों के बीच एक-दूसरे से डरने के

स्थायी कारण उत्पन्न हो गए हैं। सबल और निर्बल देशों के बीच शोषण का तथा दो सबल देशों के मध्य आर्थिक संघर्ष का भय पैदा हो गया है। शोषण की यह व्यवस्था सार्वभौम है तथा निरन्तर चल रही है। इसका कारण पूरे विश्व में चल रही लाभ कमाने की भावना है। उन देशों की सरकारें भी इसको संरक्षण दे रही हैं। वर्तमान अर्थोन्माद को नियन्त्रित करने के लिए पवित्र तथा उच्च आदर्शों वाले प्रशासकों की आवश्यकता है।

सुख और निर्भयता-सुखी रहना और आतंक से मुक्त रहना प्रत्येक मनुष्य का अधिकार है। ये दोनों बातें प्रयत्नसाध्य हैं। निर्भयता के लिए दो बातें आवश्यक हैं। एक, हम किसी को न कष्ट पहुँचाएँ और न डराएँ, दूसरी किसी में हमें सताने या डराने की हिम्मत न हो।

इनमें पहली बात शील से तथा दूसरी शक्ति और पुरुषार्थ से सम्बन्धित है। किसी को न डराने से भय से मुक्ति नहीं मिल सकती। दुष्ट लोग दूसरों को भयभीत करते ही हैं। उनको उनमें दण्ड के भय का संचार करके ही रोका जा सकता है।

→ महत्त्वपूर्ण गद्यांशों की सन्दर्भ सहित व्याख्याएँ-

1. किसी आती हुई आपदा की भावना या दुःख के कारण के साक्षात्कार से जो एक प्रकार का आवेगपूर्ण अथवा स्तम्भ-कारक मनोविकार होता है उसी को भय कहते हैं। क्रोध दु:ख के कारण पर प्रभाव डालने के लिए आकुल करता है और भय उसकी पहुँच से बाहर होने के लिए।

क्रोध दु:ख के कारण के स्वरूप-बोध के बिना नहीं होता। यदि दुःख का कारण चेतन होगा और यह समझा जाएगा कि उसने जान-बूझकर दुःख पहुँचाया है, तभी क्रोध होगा। पर भय के लिए कारण का निर्दिष्ट होना जरूरी नहीं; इतना भर मालूम होना चाहिए कि दुःख या हानि पहुँचेगी। (पृष्ठ संख्या 37)

कठिन शब्दार्थ-आपदा = संकट। साक्षात्कार = आमना-सामना। आवेग = उत्तेजना। स्तम्भ-कारक = निर्णय लेने में अक्षम बनाने वाला। मनोविकार = मन के भाव। आकुल = विचलित। चेतन = सजीव। निर्दिष्ट = नियत, तय॥

सन्दर्भ व प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा रचित निबन्ध ' भय' से उद्धृत है।' भय' शुक्ल जी का मनोविकार सम्बन्धी निबन्ध है। लेखक ने इसमें मानव मन के भय नामक भाव के बारे में बताया है तथा 'क्रोध' के साथ उसकी तुलना की है।

व्याख्या- लेखक कहता है कि जब मनुष्य का सामना किसी आने वाले अर्थात् भावी संकट या दु:ख की भावना से होता है तो उसके मन में एक मनोभाव उत्पन्न होता है जो उसके मन में उत्तेजना भरकर उसको स्तंभित कर देता है।

उस मनोभाव को 'भय' कहते हैं। भय मनुष्य को दु:ख से बचने के लिए प्रेरित करता है। मनुष्य के मन का एक अन्य मनोभाव क्रोध है। क्रोध दु:ख के कारण को प्रभावित करने के लिए व्याकुल रहता है। जब तक दु:ख के कारण के स्वरूप का ज्ञान नहीं होता तब तक क्रोध उत्पन्न नहीं होता।

क्रोध के उत्पन्न होने के लिए यह पता होना जरूरी है कि दु:ख किसके कारण उत्पन्न हुआ है। यदि दु:ख देने

वाला कोई चेतनाशील प्राणी होता है तथा यह पता चलता है कि उसने जानबूझकर दु:ख पहुँचाया है तभी क्रोध उत्पन्न होता है। क्रोध का लक्ष्य हानि या दु:ख पहुँचाने वाला होता है। भय उत्पन्न होने के लिए यह जानना आवश्यक नहीं कि दु:ख पहुँचाने वाला कौन है, दु:ख का कारण कौन है? भय की उत्पत्ति के लिए इतना जानना ही अपेक्षित है कि दु:ख होगा अथवा हानि होगी। यह मालूम होते ही कि दु:ख होगा, भय उत्पन्न होगा और उससे बचने का उपाय भी किया जाएगा।

विशेष-

(i) भय क्या है, यह स्पष्ट किया गया है।
(ii) भावी दु:ख के विचार से क्रोध तथा भय नामक मनोविकार उत्पन्न होते हैं। दोनों के उत्पन्न होने की स्थिति पर विचार किया गया है।
(iii) भाषा संस्कृत के तत्सम शब्दों से युक्त है तथा गम्भीर है॥
(iv) शैली विचार-विश्लेषणात्मक है।

2. भय का विषय दो रूपों में सामने आता है-असाध्य रूप में और साध्य रूप में। असाध्य विषय वह है जिसका किसी प्रयत्न द्वारा निवारण असम्भव हो या असम्भव समझ पड़े। साध्य विषय वह है जो प्रयत्न द्वारा दूर किया या रखा जा सकता हो। दो मनुष्य एक पहाड़ी नदी के किनारे बैठे या आनन्द से बातचीत करते चले जा रहे थे। इतने में सामने से शेर की देहाड़ सुनाई पड़ी।

यदि वे दोनों उठकर भागने, छिपने या पेड़ पर चढ़ने आदि का प्रयत्न करें तो बच सकते हैं। विषय के सा य या असाध्य होने की धारणा परिस्थिति की विशेषता के अनुसार तो होती ही है पर बहुत कुछ मनुष्य की प्रकृति पर भी अवलम्बित रहती है। क्लेश के कारण का ज्ञान होने पर उसकी अनिवार्यता का निश्चय अपनी विवशता या अक्षमता की अनुभूति के कारण होता है।

यदि यह अनुभूति कठिनाइयों और आपत्तियों को दूर करने के अनभ्यास या साहस के अभाव के कारण होती है, तो मनुष्य स्तम्भित हो जाता है और उसके हाथ-पाँव नहीं हिल सकते। पर कड़े दिल का या साहसी आदमी पहले तो जल्दी डरता नहीं और डरता भी है तो सँभलकर अपने बचाव के उद्योग में लग जाता है। (पृष्ठ संख्या 37)

कठिन शब्दार्थ-विषय = कारण (व्यक्ति, घटना आदि)। असाध्य = कठिन, प्रयत्न करके भी जिसका निवारण न हो सके, अनिवार्य। साध्य = निवारणीय, प्रयत्न करने से जिसका निदान सम्भव हो। धारणा = विचार, विश्वास। प्रकृति = स्वभाव। अवलम्बित = निर्भर। क्लेश = दु:ख, कष्ट। विवशता = बाध्यता। अक्षमता = शक्तिहीनता। अनभ्यास = अभ्यास न होना। स्तम्भित = निष्क्रिय। उद्योग = काम।

सन्दर्भ व प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक ‘सृजन’ में संकलित ‘भय’ शीर्षक निबन्ध से उद्धृत है। इसके रचयिता आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। किसी भावी दु:ख के कारण का सामना होने से मन में जो आवेगपूर्ण मनोभाव उत्पन्न होता है, उसको भय कहा जाता है। यह दु:ख से बचने के लिए प्रयत्नशील होने की प्रेरणा देता है। भय के लिए उसका कारण निर्दिष्ट होना जरूरी नहीं होता।

व्याख्या- लेखक ‘भय’ नामक मनोविकार का विवेचन कर रहा है। वह बता रहा है कि भय दो तरह का होता है। एक तो वह जिससे प्रयत्न के द्वारा बचा जा सके। इसको साध्य भय भी कहते हैं। दूसरा वह जो

असाध्य होता है, प्रयत्न करके भी उस भय का निवारण नहीं हो पाता। यह अनिवार्य होता है। इसको अग्रलिखित उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। दो मनुष्य किसी पहाड़ी नदी के किनारे बैठे हैं अथवा जा रहे हैं। वे प्रसन्नतापूर्वक बातें करते चल रहे हैं कि अचानक सामने से शेर की दहाड़ सुनाई देती है। शेर से बच सकते हैं। यह भय साध्य है। भय साध्य है अथवा असाध्य है, इस बात का निश्चय परिस्थिति के अनुसार होता है अथवा यह मनुष्य के स्वभाव पर निर्भर करता है।

किसी दु:ख का पता चलने पर यदि मनुष्य उसके निवारण में स्वयं को असमर्थ तथा अशक्त अनुभव करता है तो वह भय अनिवार्य माना जाता है। जिस मनुष्य में साहस नहीं होता या जिसको संकटों से जूझने का अभ्यास नहीं होता, उसी को भय अनिवार्य प्रतीत होता है।

उसके हाथ-पाँव काम नहीं करते और वह नि:चेष्ट हो जाता है। परन्तु साहसी और कठोर दिल को मनुष्य जल्दी भयभीत नहीं होता। यदि होता भी है तो शीघ्र सावधान हो जाता है तथा भय से बचने का उपाय करने लगता है।

विशेष-

(i) प्रस्तुत गद्यांश में भय का प्रकार बताया गया है।
(ii) भय का असाध्य होना मनुष्य के स्वभाव तथा परिस्थिति पर निर्भर करता है।
(ii) भाषा तत्सम शब्द प्रधान, गम्भीर तथा साहित्यिक है।
(iv) शैली विचार-विवेचनात्मक है।

3. भय जब स्वभावगत हो जाता है तब कायरता या भीरुता कहलाता है और भारी दोष माना जाता है, विशेषतः पुरुषों में। स्त्रियों की भीरुता तो उनकी लज्जा के समान ही रसिकों के मनोरंजन की वस्तु रही है। पुरुषों की भीरुता की पूरी निंदा होती है।

ऐसा जान पड़ता है कि पुराने जमाने से पुरुषों ने न डरने का ठेका ले रखा है। भीरुता के संयोजक अवयवों में क्लेश सहने की आवश्यकता और उसकी शक्ति का अविश्वास प्रधान है। शत्रु का सामना करने से भागने का अभिप्राय यही होता है कि भागने वाला शारीरिक पीड़ा नहीं सह सकता तभी अपनी शक्ति के द्वारा उस पीड़ा से अपनी शक्ति का विश्वास नहीं रखता। (पृष्ठ संख्या 37)

कठिन शब्दार्थ-स्वभावगत होना = आदत बनना। भीरुता = डरपोकपन। कायरता = साहसहीनता, कापुरुषता। निंदा = बुराई। अवयव = अंग।

सन्दर्भ व प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक ‘सृजन’ में संकलित ‘भय’ शीर्षक निबन्ध से उधृत है। इसके लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। लेखक ने बताया है कि भय साध्य तथा असाध्य-दो प्रकार का होता है। साहसी पुरुष भयभीत नहीं होता, यदि होता भी है तो शीघ्र उससे मुक्ति का उपाय तलाश करने में लग जाता है।

व्याख्या- लेखक का मानना है कि कभी-कभी भय मनुष्य की आदत बन जाता है। कुछ मनुष्य आदतन डरपोक होते हैं। उनका डरपोकपन उनके चरित्र का दोष माना जाता है तथा समाज में उनकी बुराई भी होती है। स्त्रियाँ भी डरपोक होती हैं। जिस प्रकार उनकी लज्जाशीलता आनन्दप्रिय पुरुषों को मनोरंजक

प्रतीत होती है उसी प्रकार उनका डरना भी उनको आनन्दित करता है। परन्तु पुरुषों का डरपोक होना उनकी कायरता कहलाता है तथा निन्दा का विषय बनता है। ऐसा मालूम होता है कि प्राचीनकाल से ही पुरुषों ने भयभीत न होने का ठेका ले रखा है।

डरपोकपन को उत्पन्न करने वाले अनेक अंग हैं। इनमें कष्ट सहने की आवश्यकता तथा उससे बचने का अविश्वास मुख्य है। मनुष्य अपने शत्रु का सामना करने की अपेक्षा उससे बचने के लिए भागता है तो समझा जाता है कि वह शरीर को होने वाले कष्ट को सहन नहीं कर सकता। उसको यह विश्वास नहीं होता कि वह अपनी शक्ति से उस कष्ट से बच सकेगा।

विशेष-

(i) डरपोकपन जब स्वभाव का अंग बन जाता है तो उसको कायरता अथवा भीरुता कहते हैं।
(ii) पुरुषों की भीरुता निन्दनीय होती है किन्तु स्त्रियों की भीरुता रसिकों के मनोरंजन की वस्तु है।
(iii) भाषा साहित्यिक, गम्भीर तथा प्रवाहपूर्ण है।
(iv) शैली विचार-विवेचनात्मक है। 'ऐसा जान पड़ता है .... ठेका ले रखा है' में व्यंग्य-विनोद शैली है।

4. एक ही प्रकार की भीरुता ऐसी दिखाई पड़ती है जिसकी प्रशंसा होती है। वह धर्म-भीरुता है। पर हमे तो उसे भी कोई बड़ी प्रशंसा की बात नहीं समझते। धर्म से डरने वालों की अपेक्षा धर्म की ओर आकर्षित होने वाले हमें अधिक धन्य जान पड़ते हैं। जो किसी बुराई से यही समझकर पीछे हटते हैं कि उसके करने से अधर्म होगा, उसकी अपेक्षा वे कहीं श्रेष्ठ हैं जिन्हें बुराई अच्छी ही नहीं लगती। (पृष्ठ संख्या 38)

कठिन शब्दार्थ-धन्य = प्रशंसनीय। अधर्म = पाप, धर्मविरुद्ध कार्य। सन्दर्भ व प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित ' भय' शीर्षक निबन्ध से लिया गया है। इसके लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। भय की भावना को भीरुता कहते हैं। भीरुता पुरुषों का दुर्गुण माना जाता है। केवल धर्म भीरूता ही प्रशंसा का विषय होती है।

व्याख्या- लेखक कहता है कि भीरुता प्रशंसनीय नहीं है। पुरुषों में इसको दुर्गुण माना जाता है तथा इसकी निन्दा होती है। संसार में एकमात्र भीरुता धर्म-भीरुता अर्थात् धर्म से डरना ही है, जिसकी प्रशंसा की जाती है। लेखक की दृष्टि में धर्म से डरना कोई अच्छी बात नहीं है।

यह प्रशंसनीय भी नहीं है। धर्म से डरने वाले मनुष्य की तुलना में वह मनुष्य अधिक अच्छा है जो धर्म की ओर आकर्षित होता है तथा धर्म का आचरण करता है। कोई मनुष्य किसी काम को अच्छा नहीं समझता और उसको अधर्म समझकर उससे बचता है तो वह प्रशंसा का पात्र नहीं है। उसकी तुलना में वह मनुष्य ज्यादा अच्छा है जिसको बुराई अच्छी नहीं लगती।

विशेष-

(i) संसार में धर्म-भीरुता की प्रशंसा होती है किन्तु लेखक के मत से यह ठीक बात नहीं है।
(ii) लेखक का मत है कि धर्म से डरना नहीं अपितु धर्म की ओर आकर्षित होना अच्छी बात है।

(iii) भाषा सरल तथा विषय के अनुकूल है।
(iv) शैली विवेचनात्मक है।

5. पर सभ्य, उन्नत और विस्तृत समाज में भय के द्वारा स्थायी रक्षा की उतनी सम्भावना नहीं होती। इसी से जंगली और असभ्य जातियों में भय अधिक होता है। जिससे वे भयभीत हो सकते हैं। उसी को वे श्रेष्ठ मानते हैं और उसी की स्तुति करते हैं।

उसके देवी-देवता भय के प्रभाव से ही कल्पित होते हैं। किसी आपत्ति या दुःख से बचे रहने के लिए ही अधिकतर वे उसकी पूजा करते हैं। अति भय और भय कारक का सम्मान असभ्यता के लक्षण हैं। अशिक्षित होने के कारण अधिकांश भारतवासी भी भय के उपासक हो गए हैं। वे जितना सम्मान एक थानेदार का करते हैं, उतना किसी विद्वान का नहीं। (पृष्ठ संख्या 38-39)

कठिन शब्दार्थ-उन्नत = प्रगतिशील, ऊँचा। स्तुति = प्रशंसा। कल्पित = कल्पना द्वारा निर्मित। भय कारक = भय पैदा करने वाला। लक्षण = चिन्ह। उपासक = पुजारी॥

सन्दर्भ व प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'भय' शीर्षक निबन्ध से लिया गया है। इसके लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। जंगली लोगों में भय अधिक पाया जाता है। उनका परिचय कुछ लोगों से ही होता है। वे किसी अपरिचित द्वारा हमला होने पर उससे बचकर और भागकर अपनी रक्षा करते हैं, परन्तु सभ्य समाज में ऐसा नहीं हो पाता।

व्याख्या- लेखक कहता है कि जो मानव समाज विकसित, प्रगतिशील और ऊँचा होता है, उसमें भय से स्थायी सुरक्षा सम्भव नहीं होती। इस कारण असभ्य तथा जंगली जातियों में भय का भाव अधिक पाया जाता है।

असभ्य समाज के लोग जिससे डरते हैं, उसी को अच्छा मानते हैं। वही उनके विचार से श्रेष्ठ होता है। वे उसकी पूजा करते हैं। उसी में वे धार्मिक देवी-देवताओं की कल्पना कर लेते हैं। तथा उसी की प्रशंसा भी करते हैं। जंगली लोगों में भय की भावना हो देवी-देवताओं तथा पूजनीय जनों को पैदा करती है। उनके देवता डर की भावना से ही बनते हैं। किसी आपदा से बचने के लिए वे उसी की पूजा करते हैं।

डर तथा डराने वाले के प्रति आदर-सम्मान की भावना असभ्यता की पहचान है। भारत में शिक्षा का अभाव है। अत: भारत के लोग भी डरपोक बन गए हैं तथा भयभीत करने वालों की पूजा करते हैं। वे जितना आदर किसी थानेदार का करते हैं उतना किसी विद्वान व्यक्ति का नहीं करते।

विशेष-

(i) भय देवी-देवताओं के जन्म तथा पूजा का कारण है।
(ii) भय के कारण भय पैदा करने वाले की पूजा तथा सम्मान करना असभ्यता है।
(iii) भाषा विषयानुकूल तथा बोधगम्य है।
(iv) शैली विचारात्मक है।

6. भूतों का भय तो अब बहुत कुछ छूट गया है, पशुओं की बाधा भी मनुष्य के लिए प्रायः नहीं रह गई है; पर मनुष्य के लिए मनुष्य का भय बना हुआ है। इस भय के छूटने के लक्षण भी नहीं दिखाई देते। अब मनुष्यों के दुःख का कारण मनुष्य ही है।

सभ्यता से अन्तर केवल इतना ही पड़ा है कि दुःख-दान की विधियाँ बहुत गूढ़ और जटिल हो गई हैं। उसका क्षोभकारक रूप बहुत-से आवरणों के भीतर ढक गया है। अब इस बात की आशंका तो नहीं रहती है कि कोई जबरदस्ती आकर हमारे घर, खेत, बाग-बगीचे, रुपए-पैसे छीन न ले, पर इस बात को खटका रहता है कि कोई नकली दस्तावेजों, झूठे गवाहों और कानूनी बहसों के बल से इन वस्तुओं से वंचित न कर दे। दोनों बातों का परिणाम एक ही है। (पृष्ठ सं. 39)

कठिन शब्दार्थ-बाधा = रुकावट। दुःख-दान = दुःख पहुँचाना। विधि = तरीका। गूढ़ = कठिन। जटिल = उलझनपूर्ण, अस्पष्ट। क्षोभकारक = दुःख देने वाला। आवरण = पर्दा। खटका रहना = आशंका होना। दस्तावेज = कानूनी कागजात। बहस = तर्क-वितर्क। वंचित = रहित॥

सन्दर्भ व प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित मनोविकार सम्बन्धी 'भय' नामक निबन्ध से उधृत है। इसके लेखक प्रसिद्ध निबन्धकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। शुक्ल जी बता रहे हैं कि जब मनुष्य का ज्ञान बढ़ता है तथा उसके शरीर और मन शक्तिशाली हो जाते हैं तो भय से मुक्ति मिल जाती है। सभ्यता की वृद्धि के साथ भय भी कम होता जाता है।

व्याख्या-लेखक कहते हैं कि सभ्यता के विकास के साथ ही लोगों का भय दूर हो रहा है। अब भूतों से लोग नहीं डरते तथा पशुओं से भी अब डर कम हो गया है। किन्तु अभी भी मनुष्य को दूसरे मनुष्य से डर बना हुआ है। इस भय से मुक्ति होती नहीं दिखाई दे रही है। अब मनुष्यों को मनुष्य ही दुःख देते हैं और सताते हैं। सभ्यता के विकास के साथ इसमें अन्तर आया है।

अब दूसरों को दुःख पहुँचाने के तरीके बदल गए हैं। कोई मनुष्य दूसरे को दुःख देता दिखाई नहीं देता। वह गुप्त रूप से ऐसे तरीके अपनाकर दूसरों को दुख देता है। कि किसी को उसका ऐसा करना दिखाई नहीं देता। दुःख देने के तरीकों पर बनावट का पर्दा पड़ गया है।

अब इस बात की आशंका तो नहीं रही कि कोई व्यक्ति किसी की धन-सम्पत्ति को बलपूर्वक उससे छीन ले जाए। परन्तु यह आशंका सदैव बनी रहती है कि कोई चालाक आदमी नकली कानूनी कागज तैयार करके, झूठे गवाह पेश करके और वकीलों द्वारा बहस कराकर अदालत में उसको अपनी सम्पत्ति का अनधिकारी सिद्ध कर दे तथा उसकी धन-सम्पत्ति उससे छीन ले। दुःख पहुँचाने की दोनों अवस्थाओं में फल एक समान रहता है।

विशेष-

(i) लेखक बताता है कि सभ्यता के विकास के साथ भय कम होता है।
(ii) भय पूर्णत: समाप्त नहीं हुआ। बस उसका रूप बदल गया है। चालाक लोग अब भी दूसरों को कष्ट पहुँचाते हैं।
(iii) भाषा प्रवाहपूर्ण, विषयानुकूल तथा बोधगम्य है।
(iv) शैली विवेचनात्मक है॥

7. सभ्यता की वर्तमान स्थिति में एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति से वैसा भय तो नहीं रहा जैसा पहले रहा करता था, पर एक जाति को दूसरी जाति से, एक देश को दूसरे देश से, भय के स्थायी कारण प्रतिष्ठित हो गए हैं। सबल और सबल देशों के बीच अर्थ-संघर्ष की, सबल और निर्बल देशों के बीच अर्थ-शोषण की प्रक्रिया अनवरत चल रही है; एक क्षण का विराम नहीं है।

इस सार्वभौम वणिग्वृत्ति से उसका अनर्थ कभी न होता यदि क्षात्रवृत्ति उसके लक्ष्य से अपना लक्ष्य अलग रखती। पर इस युग में दोनों का विलक्षण सहयोग हो गया है। वर्तमान अर्थोन्माद को शासन के भीतर रखने के लिए क्षात्रधर्म के उच्च और पवित्र आदर्श को लेकर क्षात्रसंघ की प्रतिष्ठा आवश्यक है। (पृष्ठ संख्या 39-40)

कठिन शब्दार्थ-प्रतिष्ठित = स्थापित। अर्थ-संघर्ष = आर्थिक प्रतिस्पर्धा। शोषण = दूसरे के अधिकार छीनना, धन-सम्पत्ति का अपहरण। प्रक्रिया = कार्य। अनवरत = निरन्तर, लगातार। विराम = रोक। सार्वभौम = विश्वव्यापी। वणिग्वृत्ति = व्यापार-कार्य, व्यापार द्वारा लाभ कमाना। अनर्थ = हानि। क्षात्रवृत्ति = क्षत्रिय अर्थात् शासन का कर्तव्य, शासन द्वारा शोषण तथा अत्याचार रोकना। लक्ष्य = उद्देश्य। विलक्षण = अनोखा। अर्थोन्माद = आर्थिक पागलपन, धन कमाने के उचित-अनुचित तरीके अपनाना। शासन = नियन्त्रण। प्रतिष्ठा = स्थापना, सम्मान॥

सन्दर्भ व प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'भय' शीर्षक निबन्ध से उद्धृत है। इसके रचयिता प्रसिद्ध निबन्धकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। सभ्यता के विकास ने समाज में भय कम कर दिया है। भय का रूप बदल गया है।

आज कोई व्यक्ति किसी को सीधे तरीके से दु:ख नहीं देता। दु:ख देने के छद्म रूप विकसित हो गए हैं। एक देश दूसरे पर आक्रमण तो नहीं करता किन्तु दूसरे देश का व्यापार के माध्यम से शोषण करता है। समाज में भी एक वर्ग दूसरे का शोषण करता है।

व्याख्या- लेखक बता रहे हैं कि संसार में सभ्यता का तेजी के साथ विकास हो गया है। इस कारण एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से पहले की तरह का डर नहीं रहा है। परन्तु संसार में अब भी एक जाति दूसरी जाति को, एक देश दूसरे देश को सताता है और डराता है।

विश्व में एक देश को दूसरे देश तथा एक जाति को दूसरी जाति से भयभीत होने के स्थायी कारण स्थापित हो गए हैं। दो बलेवान देशों में प्रबल आर्थिक स्पर्धा चल रही है। एक शक्तिशाली देश दूसरे निर्बल देश का व्यापार आदि आर्थिक उपायों से शोषण करता है। ये बातें संसार में निरन्तर चल रही हैं। इनसे क्षणभर की भी मुक्ति नहीं हो पाती। व्यापार द्वारा लाभ कमाने की यह प्रवृत्ति विश्वव्यापी बन चुकी है।

तथा ऐसे नियम बनाए गए हैं कि निर्धन और अविकसित देश सबल और धनवान देशों के आर्थिक दोहन से बच नहीं पाते। इस व्यापारी-प्रवृत्ति के साथ देशों की सरकारें भी मिल गई हैं। आर्थिक क्रियाओं द्वारा शोषण का लक्ष्य तय कर लिया गया है। शासन सत्ता और व्यापारी वर्ग अर्थात् पूँजीपति वर्ग का उद्देश्य एक ही हो गया है। विश्व में यह जो आर्थिक पागलपन फैला है।

व्यक्ति और देश धन के पीछे नैतिकता आदि को छोड़कर भाग रहे हैं। इस पर नियन्त्रण कठोर और पवित्र

शासन व्यवस्था द्वारा ही हो सकता है। क्षत्रिय धर्म अर्थात् प्रशासन का उच्च आदर्श बनाए रखने से ही संसार को पूँजीवादी शोषण से बचाया जा सकता है।

विशेष-

(i) लेखक का कहना है कि संसार में एक देश दूसरे देश का व्यापार आदि आर्थिक क्रियाओं से शोषण कर रहा है। देशों की शासन सत्ता भी आर्थिक शोषण में उनकी साझीदार है तथा उनको संरक्षण प्रदान करती है।

(ii) संसार में धन-सत्ता अत्यन्त प्रबल है। लोग तथा देश धन के पीछे पागल हो रहे हैं। नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है।

(iii) भाषा तत्सम शब्द प्रधान, प्रवाहपूर्ण तथा साहित्यिक है।

(iv) शैली विचारात्मक तथा विवेचनात्मक है।

8. जिस प्रकार सुखी होने का प्रत्येक प्राणी को अधिकार है, उसी प्रकार मुक्तातंक होने का भी। पर कर्म-क्षेत्र के चक्रव्यूह में पड़कर जिस प्रकार सुखी होना प्रयत्न-साध्य होता है उसी प्रकार निर्भय रहना भी।

निर्भयता के सम्पादन के लिए दो बातें अपेक्षित हैं-पहली तो यह कि दूसरों के हमसे किसी प्रकार का भय या कष्ट न हो; दूसरी यह कि हमको कष्ट या भय पहुँचाने का साहस न कर सके। इनमें से एक का सम्बन्ध उत्कृष्ट शील से है और दूसरी का शक्ति और पुरुषार्थ से।

इस संसार में किसी को न डराने से ही डरने की सम्भावना दूर नहीं हो सकती। साधु से साधु प्रकृति वाले को क्रूर लोभियों से क्लेश पहुँचता है। अतः उसके प्रयत्नों को विफल या भय-संचार द्वारा रोकने की आवश्यकता से हम बच नहीं सकते। (पृष्ठ संख्या 40)

कठिन शब्दार्थ-मुक्तातंक = भय से मुक्त रहना, निर्भय रहना। चक्रव्यूह = जाल। प्रयत्न-साध्य = प्रयत्न करके सफलता मिलना। निर्भयता = निर्भीकता, निडरता। अपेक्षित = जरूरी। उत्कृष्ट = उत्तम। शील = सदाचार। पुरुषार्थ = पराक्रम। साधु = सज्जन। क्रूर = निर्दये। भय-संचार = भयभीत करना।

सन्दर्भ व प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'भय' शीर्षक निबन्ध से उद्धृत है। इसके लेखक प्रसिद्ध निबन्धकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। शुक्ल जी कहते हैं कि आज भी एक व्यक्ति, दूसरे को तथा एक देश दूसरे को डराता है।

केवल भयभीत करने की विधियाँ बदल गई हैं। आजकल व्यापार आदि आर्थिक उपाय शोषण को माध्यम बन गए हैं। देशों की शासन-सत्ता इस आर्थिक शोषण को संरक्षण देती है। पूरे संसार में आतंक व्याप्त है।

व्याख्या- लेखक कहता है कि संसार में प्रत्येक प्राणी को यह अधिकार है कि वह सुखी रहे। उसी प्रकार उसको यह अधिकार भी है कि कोई उसको डराए नहीं और वह भय से मुक्त रहे। परन्तु संसार में लोगों की कार्यपद्धति ने चक्रव्यूह का रूप धारण कर लिया है। जिसमें पूरा विश्व फंसा हुआ है। इसमें फंसने के

बाद खूब प्रयत्न करने पर ही मनुष्य को सुख प्राप्त हो सकता है। उसी प्रकार बिना प्रयास के वह निर्भीक नहीं रह सकता। संसार में कष्टों और भय का वातावरण बना हुआ है। निर्भय रहने के लिए दो बातों का होना आवश्यक है। पहली यह कि दूसरों को हमसे किसी प्रकार का डर न हो।

हम किसी को कष्ट न दें, भयभीत न करें। दूसरी बात यह कि किसी में उतना साहस न हो कि वह हमें डरा सके। इनमें से पहली बात का सम्बन्ध उत्तम शिष्टाचार से है। यदि हम शिष्ट और सुसंस्कृत होंगे तो किसी को भयभीत नहीं करेंगे उसे कष्ट नहीं देंगे।

दूसरी बात का संम्बन्ध शक्ति और पराक्रम की भावना से है। शक्ति के प्रयोग द्वारा ही दूसरों को डराने और कष्ट देने वालों को रोका जा सकता है। संसार में डरने और डराने की समस्या तो बनी ही रहेगी। निर्दय लोभी लोग सज्जन पुरुषों को डराते ही हैं। यह उनका स्वभाव होता है। उनको रोकने के लिए उनमें दण्ड का भय पैदा करना जरूरी है।

विशेष-

(i) लेखक का मानना है कि संसार में प्रत्येक व्यक्ति को सुखी और निर्भय रहने का अधिकार है। परन्तु ये दोनों चीजें बिना प्रयास के मिलना असम्भव है।

(ii) विश्व को भयमुक्त रखने के लिए आवश्यक है कि हम किसी को डराएँ नहीं। जो दुष्ट व्यक्ति कहने से न मानें, उनमें दण्ड का भय पैदा किया जाए।

(iii) भाषा बोधगम्य, साहित्यिक गम्भीर है।

(iv) शैली विचारात्मक तथा विवेचनात्मक है।